संस्कृत प्रश्न पत्र
द्वितीय

प्रश्न :- निम्नलिखित में से किन्हीं पांच की निरूक्ति एवं पर्याय लिखें, आयु, शरीर, मन, अग्नि, वात, पित्त, श्लेष्मा, रस, रक्त, मांस, मेदा, अस्थि, मज्जा, एवं शुक्र?

उत्तर :- निरुक्ति एवं पर्याय :-

आयु :- तत्रायुश्चेतनानुवृति जीवितामुबन्धो धारि चेत्येकोऽर्थ। (च0सू030)
शरीरेन्द्रिय सत्वात्मसंयोगो आयु0 (सुश्रुत)

शरीरेन्द्रिय सत्वात्म संयोगो (अ0हृ0)

अर्थात् :- शरीर, इन्द्रियां, मन तथा आत्मा के संयोग के द्वारा जितने समय तक प्राणी चेतन रूप बना रहे, उस काल को आयु कहते हैं।

पर्याय :- .....धारि जीवितम्।
नित्यगश्चानुबंधश्च पर्यायैरायुरुच्यते।।

धारि, जीवित, नित्यग, अनुबन्ध ये आयु के पर्याय है।

शरीर निरुक्ति :-

1. शीर्यते इति शरीरम्।।

2. शीर्यते हिनस्ति आत्मानम् इति शरीरम्।

3. तत्र शरीर नाम चेतनाधिष्ठानभूतं पंचमहाभूतविकारसमुदायात्मकं समयोगवाहि.....(चरक)

जिसका निरन्तर क्षरण होता रहे, जो परिवर्तन शील हो, जिसमें चयापचय प्रक्रिया निरन्तर चलती रहे, आत्मा का आश्रय भूत तथा महाभूतों के समुदाय से बना स्वरूप ही शरीर है।

शरीर पर्याय :- क्षेत्र देह, वपु, गात्र, काय कलेवर ये शरीर के पर्याय है।

मन निरुक्ति:- 1. मन्यते ज्ञायते इति मनः।

2. मन्यते ज्ञायते अवबुद्ध्यते इति मनः।

3. मनस्यति अनेन इति मनः।

जिसके द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है, मनन किया जाता है उसे मन कहते हैं।

मन के पर्याय :- मन, चित, चेतस, मनस।

अग्नि :- अगति ऊर्ध्व गच्छतीति अग्निः।

पर्याय :- वैश्वानर, तनूनपात्, अमीवचातन, जठराग्नि, अन्तरग्नि, पाचकाग्नि।

वात :- वा गति गन्धनयोः वाति गच्छति इति वायुः। गन्धं नीत्वा वाति इति वायुः।

पर्याय :- वात, वायु, मरुत, प्रभंजन, समीर।

पित्त :- तप संतापे- शरीर में ताप, सन्ताप या उष्मा देने वाला पदार्थ पित्त है। पर्याय, उष्मा, जाठराग्नि, पाचकाग्नि, धात्वग्नि।

श्लेष्मा निरुक्ति :- श्लिष आलिंगने-संश्लेषित करने वला पदार्थ श्लेष्मा है।

कफ :-केन जलेन फलति इति कफ।

पर्याय :- संश्लेषक, रसबोधक, कफ।

जल :- शीतस्पर्शवत्य आपः- जिसका स्पर्श शीतल है, जिसकी उत्पत्ति का कारण अग्नि महाभूत है तथा प्राणियों का प्राण जल है।

जल पर्याय :- अप, अम्बु, नीर, वारि, उदक आदि।

रस :- 1. रस्यते आस्वाद्यते इति रसः (चरक)

2. रसति अहरहगच्छतीति रसः।

3. रसना ग्राह्यो गुणो रसः।

4. रसनार्थो रसस्तस्य द्रव्यमाप क्षितिस्तथा।

पर्याय :- रस, स्वरस, तरलद्रव।

रक्त :- 1. रञ्ज करणे क्तः

2. रञ्जितास्तेजसत्वात् शरीरस्थेन देहिनाम्।
अव्यापन्न प्रसन्नेन रक्तमित्यभिधीयते। सु0सु0 14
पित्तोष्मणः स रागेन रसोरक्तत्वमृच्छति। च0चि0

रक्त पर्याय :- रुधिर, लोहित, असृक्, अस्र, शोणित।

मांस :- वाय्वम्बुतेजसां रक्तमूष्मणा चाभिसंयुक्तम्।
स्थिरतां प्राप्य मांसं स्यात् (च0चि0 15)

वायु, जल एवं तेज से पक्व रक्त का स्थिर स्वरुप मांस है।

पर्याय :- पिशित, पलल, क्रव्य पलं।

मेद :- 1. **मेदते स्निह्यति मिद+अच** स्वोरमणापस्वमेव तत्।

2. स्वतेजोऽम्बुगुणस्निग्धोद्रिक्तं मेदोऽभिजायते।

3. यमांस स्वमग्निना पक्वं तन्मेद इति कथ्यते।

पर्याय :- वसा, वस, मांससार, मांसस्नेह।

अस्थि :- 1. मेदः पुष्टि मस्थ्नां। या मेदसोऽस्थि जायते (सु0सू0 14)

2. अस्यते अस कथिन।
मेदोयत् स्वाग्निना पक्वं वायुना चाति शोधिम्।

3. तदस्थि संज्ञा लभते ससारः सर्वविग्रह।

पर्याय :- हड्डी, सार, विग्रह।

मज्जा :- 1. अस्थि यत्स्वाग्निना पक्वं तस्य सारो भवेद् घन्
यास्वेदवत्पृथग्भूतः समज्जेत्यभिधीयते।

2. मज्ज+आप्+टाप् :- अस्थि जब अपनी अग्नि द्वारा पाक होते होते, उसका घन रूप सार भाग बनता है इससे जो स्वेद जैसा भाग पृथक होता है। वह मज्जा है। अस्थियों में मध्य का भाग जो दो स्वरूपों में होता है रक्त एवं पीत।

3. मज्जनात् मज्जा पर्याय :- अस्थिसार, सार, रजसः।

शुक्र :- तस्मान्मज्जातु यः स्नेहः शुक्रं संजायते ततः। च0चि0 15

पर्याय :- पुंस्त्व, पौन्स्त्व, रेत, बीजं, वीर्य, पुरुषत्व, पौरुष।

प्रश्न :- इन्द्रिय एवं ज्ञानेन्द्रियों की परिभाषा एवं पर्याय लिखें?

उत्तर :-

इन्द्रिय :- इन्द्र आत्मा तस्य साधनमिन्द्रियम्
इन्द्रप्राणायतस्य लिंगमिन्द्रियम किंवा
इन्द्रोऽन्तरात्मातस्य लिंगमिन्द्रियण्म्।

पर्याय :- गो, ज्ञान, बल, क्रिया इन्द्रिय।

श्रोत्र :- श्रूयतेऽनेन श्रु करणे+ष्ट्रन् श्रवणेन्द्रिय, कर्ण, करणेन्द्रियम्।

जो सुनने का साधन रुप है, वह श्रोत्र है।

पर्याय :- कर्ण, कान, श्रवणेन्द्रिय, अहिभवन।

चक्षु :- दृश्यं तमसि न पश्यति दीपेन विना स चक्षुरपि।
अक्षि, अश्नुतेनिष्णान्, अश्+क्सि

वस्तु को दिखाने का साधन चक्षु है।

नेत्र :- नयति नीयते वा अनेन-नी-ष्ट्रन

पर्याय :-नेत्र, चक्षु, दृष्टि, रूपग्राहक, अक्षि।

रसना :- जिह्वा इन्द्रिय- इन्द्रियं रस ग्राहकं रसं जिह्वाग्रवर्ती।

रस के ग्रहण कराने वाले साधन को रसना कहते हैं। जो जिह्वा का अग्रवर्ती भाग है।

पर्याय :- रसना, जिह्वा, रसग्राहक स्वादु।

घ्राण :- जिघ्रति घ्रात घ्राणः

पर्याय :- नासा, नाशिका, गन्धग्राहक।

गन्ध का ज्ञान कराने वाली इन्द्रिय घ्राण है।

प्रश्न :- निम्नलिखित की निरुक्ति एवं परिभाषा लिखो? धी, धृति, स्मृति, बुद्धि, मति एवं प्रज्ञा?

उत्तर :- निरुक्ति एवं पर्याय :-

धी :- धीयते अनया सा धी बुद्धिरिति।

पर्याय :- बुद्धि, युधी, बौद्धिकशक्ति, प्रज्ञा, ज्ञान।

धृति :- धार्यते जनैः या सा धृतिः धैर्यम्।
साधकाः धारयन्ति यां सा धृतिः।
धारयन्ति जनाः आपत्काले यां सा धृतिः।

परिभाषा :- ज्ञान धारण करने की शक्ति को धृति कहते हैं।

स्मृति :- स्मर्यते यया सा स्मृतिः।
स्मर्तुं योग्यं या सा स्मृतिः।

परिभाषा :- प्राप्त ज्ञान के स्मरण की शक्ति को स्मृति कहते हैं।

परिभाषा :- विषय का ज्ञान कराने वाली शक्ति को बुद्धि कहते हैं।

मति मन्यते अङ्गी कियते अनया सामति।

परिभाषा :- जिसे माना जाय या अंगीकार कियया जाय वह मति है।

प्रज्ञा :- प्रकृष्टया ज्ञायते अनयासा प्रज्ञा।

परिभाषा :- प्रकृष्टता से जिसको जाना जाय वह प्रज्ञा है।

बुद्धि :- बुध्यते ज्ञायते अनया सा बुद्धि, बोधन्ते जनाः यया सा बुद्धिः, बोधो भवति यया सा बुद्धिः।

प्रश्न :- त्रिविध मलों की परिभाषा एवं निरुक्ति एवं ?

उत्तर :- परिभाषा :- विषय का ज्ञान कराने वाली शक्ति को बुद्धि कहते हें।

मति :- मन्यते अङ्गीक्रियते अनया सा मतिः।

परिभाषा :- जिसके द्वारा विषय को स्वीकृत किया जाता है, वह मति है।

प्रज्ञा :- प्रकृष्टतया ज्ञायते अनया सा प्रज्ञा।

परिभाषा :- विशेष वैदिक ज्ञान को प्रज्ञा कहते हैं।

मूत्र :- मूत्रयति जलतत्वं यत् तत् मूत्रम्।

शरीर का आहार पाक के पश्चात् उत्पन्न निःसार तरल मूत्र संस्थान से बाहर किया जाने वाला पदार्थ।

पुरीष :- 1. मलिनि करणात्मलाः।

2. पुरी देहः इषति इच्छति त्यक्तुं यं सः पुरीषः।

1. अपने विकृत स्वरूप से शरीर का मलिन करने वाला पदार्थ पुरीष है।

2. आहार पाक के पश्चात् आन्तों द्वारा बाहर किया जाने वाला निःसार पदार्थ।

स्वेद :- स्विदति शरीरात् यः सः स्वेदः।

शरीर की बढ़ी हुई उष्मा के कारण त्वचा से द्रव रूप निकलने वाला तरल स्वेद होता है। यह मज्जा का मल है।

प्रश्न :- आत्मा निरुक्ति, पर्याय एवं स्वरूप वर्णन करें?

उत्तर :- आत्मा :- अत् सातत्य गमने धातु से निष्पन्न

1. सातिभ्यां मनिन् मणिनौ-सूत्र से मनिन् प्रत्यय होकर आत्मा यह शब्द बनता है (निरुक्त)

अर्थात् जो निरन्तर गतिशील हो वह आत्मा है।

2. आत्मा ततो व्याप्ति इव स्यात्, यावद्, व्याप्ति भूत इति।

3. सर्वमेवहि तेनातितं सन्ततं गतं भवति। सर्वगतत्वात्।

यह अत् अथवा अप् धातु से निष्पन्न है यहां अप् का भाव व्याप्त होना तथा अत् धातु का अर्थ निरन्तर चलना (निरुक्त) होता है। यह सर्वत्र व्याप्त एवं निरन्तर गतिमान है। अतः इसे आत्मा कहते हैं।

परिभाषा :- प्राणी के शरीर में चेतना उत्पन्न करने वाला कारण द्रव्य आत्मा है।

यदाप्नोति यदादत्ते यच्चाति विषयानिह।
यच्चास्य सन्ततोभावस्तस्मादाप्नोति कीर्तते॥ (कठोपनिषद)

आप्नोति :- संसार के समस्त पदार्थों में व्याप्त है।

आदत्ते :- सभी पदार्थों को अपने स्वरूप में ग्रहण कर लेता है।

अत्ति :- स्थिति काल के विषयों का उपभोग करता है।

सन्ततोभाव :- इसकी सत्ता सदैव बनी रहती है।

इसके पर्याय :- क्षेत्रज्ञ, चेतना, पुरुष, लिंगशरीर, दृष्टा, भोक्ता।

प्रश्न :- निम्नलिखित की परिभाषा एवं पर्याय लिखें निदान, रोग, रोगी, भैषज?

उत्तर :- निदान :- हेतुना कारणं बीजं निदानं त्वादिकारणम्। (अ०को०)

जो व्याधि के कारणों का ज्ञान कराता हो।

निर्दिश्यते व्याधिरनेनेति निदानम् (गदाधर)

जिसके द्वारा व्याधि का निर्देश प्राप्त हो।

निश्चय दीयते प्रतिपाद्यते व्याधिरनेनेति। (जेज्जट)

व्याधि का निश्चय कराने वाला निदान है।

परिभाषा :- शरीर में रोग उत्पन्न करने वाले कारणों को निदान कहते हैं।

पर्याय :- निमित हेत्वायतनप्रत्ययोत्थान कारणः।
निदानमाहुपर्यायेः .....।

हेतु, आयतन, प्रत्यय, उत्थान एवं कारण ये सभी निदान के पर्याय है।

रोग :- 1. रोदयति जानान् यः स रोगः।

जिसके ज्ञान से व्यक्ति को दुःख होता है।

परिभाषा :- 2. रोगस्तु दोषवैषम्यम्।

शरीर में उत्पन्न दोष विषमता को रोग कहते है।

रोग पर्याय :- तत्र व्याधिरामयो गद आतंको यक्ष्मा, ज्वरो, विकारो रोग इत्यनर्थान्तरम् (च०नि०)

व्याधि, गद, आतंक, आमय, दुःख ज्वर एवं विकार।

रोगी :- रोग युक्तः यः सः रोगी।

रोग+इन=रोगिन्। रोगी।

परिभाषा :- शरीर में दोषादि को विकृत एवं विषम स्वरूप को रोग या व्याधि कहते हैं।

रोगी पर्याय :- व्याधित, रुग्ण, विकारी, आतुर।

भैषज :- 1. भिषक वैद्यः तेन जायते उत्पद्यते यत् तत् भैषजम्।

2. भेषः रोगः यत् जयतीति भेषजम्।

परिभाषा :-1. विकृत दोषों से उत्पन्न विकार को दूर करने के साधन रूप पदार्थों को भेषज कहते हैं।

2. रोग रूपी भय को जीतने वाला साधन भैषज है।

पर्याय :- औषध, रोगमुक्त, व्याधिहर, स्वस्थयोर्जस्कर।

चिकित्सा :- 1. चिकीर्षा अस्ति यस्य निदानस्य या सा चिकित्सा, रोगापनयन प्रक्रिया चिकित्सा।

पर्याय :- चिकित्सा, व्याधिहर, पथ्य, साधन, औषध, प्रायश्चित, प्रशमन, प्रकृतिस्थापन ये पर्याय है।

2. चिकित्सितं व्याधिहरं पथ्यं साधनमौषधम् प्रायश्चितं प्रशमनं प्रकृतिस्थापनं हितत्॥

पर्याय :- शरीर के विषय या विकृत दोषादि से उत्पन्न विकार को दूर कर दोषादि को समावस्था में लाने वाली प्रक्रिया चिकित्सा कहलाती है।

प्रश्न :- निम्नलिखित की परिभाषा लिखें आयुर्वेद, त्रिगुण, दोष, मल, दूष्य, संसर्ग, सन्निपात?

उत्तर :- आयुर्वेद :-

हिताहितं सुखं दुःखं आयुस्तस्य हिताहितम्।
मानं च तच्च यत्रोक्तं आयुर्वेद स उच्यते॥

जिस शास्त्र में हितायु, अहितायु, सुखायु एवं दुःखायु रूप चार प्रकार की आयु एवं इनके हिताहित का मान अर्थात् प्रमाण का ज्ञानरूप आयु के स्वरूप का वर्णन किया हो उसे आयुर्वेद कहते है।

पञ्चमहाभूत :- भू सत्तायाम धातु से भूत शब्द बनता है।

नित्यत्वे सति गुणवत्समवायिकारणत्वं भूतत्वमिति'' जो नित्य हो, सतावन हो जिनका गुणों के प्रति समवायिकारण हो तथा जो उत्पत्ति शील हो उन्हें भूत कहते है ये पांच है-आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी।

त्रिगुण :-

सत्वं रजस्तम इति मानसा स्युस्त्रयो गुणाः। (महाभारत)

प्रकाश प्रवृत्तिनियमार्थाः (कारिकावली)

प्रकाश (प्रयोजन) प्रवृति एवं निरोधार्थ (नियमन) प्रवृति वाले गुणों को त्रिगुण कहा है। ये तीन है-सत्व, रज एवं तम गुण।

दोष :- शरीर दूषणा दोषाः। जो अपनी विकृत अवस्था में शरीर को दूषित करते हैं उन्हें दोष कहते है।

शरीर दूषणादोषा धातवो देह धारणात्।
वात पित्त कफा ज्ञेया मलिनी करणान्मलाः॥ शा0

वातपित्तकफ कुपित होकर जब शरीर को दूषित करते हैं तब दोष कहे जाते हैं प्राकृत अवस्था में जब शरीर को धारण

करते है तब धातु कहलाते हैं एवं शरीर को मलिन करने के बाद रूप होते हैं। अत त्रिदोष प्राकृत अवस्था में शरीर का प्राणन, पोषण एवं वर्धन करते हैं।

मल :- मृज्यते शोध्यते इति मलः। अपने विकार स्वरूप से शरीर को मलिन करने वाले तत्व मल कहलाते हैं। मूत्र, पुरीष एवं स्वेद ये सभी मल कहलाते हैं।

दूष्य :- यद्दोषेनर्दुष्टो भवति रसादिकं मलादिकं च तत्।

शरीर के जो मूलभूत तत्व (रसादि धातु) दोष एवं मलों की विकृति से दूषित होते है। उन्हें दूष्य कहते है।

इस दृष्टि से विकृत दोषों से दूषित होने के कारण शरीर की धातुओं को दूष्य कहा गया है।

संसर्ग :- सम+सृज धञ्। दोषज विकार एवं रोग उत्पत्ति में दो दोषों का संयोग संसर्ग कहलाता है तथा इनसे उत्पन्न रोग संसर्ग रोग कहे जाते हैं।

सन्निपात :- सम+नि+पत+धञ्। तीनों दोषों को एकत्र मिलने को सन्निपात कहते हैं। तीनों दोषों की विकृति से उत्पन्न रोग को सन्निपातज रोग कहते हैं।

प्रश्न :- निम्नलिखित की परिभाषा लिखें द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, गुरु, लघु, मूल प्रकृति, प्रकृति, विकृति?

उत्तर :- द्रव्य परिभाषा :-

रसो गुणस्तथा वीर्यं विपाकः शक्तिरेव च।
पञ्चानां यः समाहारः तत् द्रव्यमिति कथ्यते।
समवायतु निश्चेष्ट कारणं गुणाः।

जो कार्य द्रव्यों के प्रति समवायिकारण वाला, रसादि पांचों शक्तियों को आश्रय देने वाला तथा जो द्रव्यत्व जाति वाला हो उसे द्रव्य कहते हैं।

गुण :-

परिभाषा :- द्रव्यों में पाये जाने वाले लघु, गुरु, शीत, उष्णादि, भौतिक धर्मों को गुण कहते हैं।

द्रव्याश्रयी न गुणवान् संयोगविभागेष्वकारणमनपेक्ष इति गुणलक्षणम्।

लक्षण :- जो द्रव्य में आश्रित होते हुए गुण रहित हो किन्तु संयोग विभाग में कारण हो उसे गुण कहते हैं।

कर्म :-

1. **प्रयत्नादि कर्मचेष्टितमुच्यते**-प्रयत्नादि के द्वारा की गई चेष्टा को कर्म कहते हैं।
2. संयोग से भिन्न होते हुए भी संयोग का समवायिकारण हो उसे कर्म कहते हैं।
3. वाणी, मन तथा शरीर की त्रिवृत प्रवृत्तियों को कर्म कहते हैं। (च०सू० 11/38)

सामान्य :-

नित्यमेकमनेकसमवेतं सामान्यम्।

नित्य होते हुए जो अनेक पदार्थों में समवेत रहता है, उसे सामान्य कहते हैं। जो तुल्यता का बोध कराता हो, समान भावों की वृद्धि करने वाला है तथा एक स्वभाव उत्पन्न करने वाला भाव ही सामान्य हैं।

ह्रासहेतु विशेषश्च, विशेषस्तु विपर्ययः, विशेषस्तु पृथकत्वकृत (चरक)

विशेष :- 1. जो धर्म संसार की एक वस्तु से अन्य वस्तुओं का भेद बताता है वह विशेष है। 2. दूसरे शब्दों में सामान्य का विपरीत विशेष है। 3. पदार्थों में विशेषता एवं पृथक्तव बताने वाला भाव विशेष है।

गुरु :- **गुरुस्तर्पणबृंहण सू0सू0 46**
गुरुवातहरं पुष्टिश्लेष्मकचिरपाकिय। (भाव प्रकाश)

जो बल, तर्पण बृंहण, पुष्टि तथा श्लेष्मा को उत्पन्न करने वाला, वायु का हरण एवं देर से पाक होने वाला हो वह गुरु गुण है।

लघु :- **लघुस्तदविपरीतः स्यात् लेखनो रोपणास्तथा। सु0सू00 40**
लघु पथ्यपरं प्रोक्तं कफघ्ने शीघ्रपाकी च। (भा0प्र0)

लघु गुण युक्त, गुरु के विपरीत गुण वाला पथ्य कफघ्न एवं शीघ्र पचने वाला है वह लघु है।

मूल प्रकृति :- जो किसी वस्तु को उत्पन्न करने वाला हो किन्तु उसका कोई उत्पादक नहीं हो उसे प्रकृति कहते हैं।

प्रकृति :- प्रकृष्टेन करोति तावान्तरमुपपादयामिति प्रकृतिः।

जो पुरुष के संयोग से तत्व परम्परा को प्रकट करती है वह प्रकृति है।

शुक्र शोणित के संयोग में जो दोष प्रबल होता है उससे देह प्रकृति का निर्माण होता है।

व्यक्ति एवं पदार्थ के स्वभाव को प्रकृति कहते हैं।

विकृति :- जो केवल किसी के कार्य ही होते हैं। किन्तु अन्य तत्वों को उत्पन्न नहीं करे वह विकृति कहलाते है यथा-पञ्चमहाभूत, महान एवं अहंकार।

प्रश्न :- दोषों की चयादि अवस्थाओं की परिभाषा लिखें?

उत्तर :- चय :- चय का अर्थ है संचय, एकत्र होना अर्थात् दोषों का ऋतु के अनुसार अपने स्थान पर संचित होना चय कहलाता है। ऋतु जन्य स्वाभाविक एवं प्रज्ञापराध जन्य अस्वाभाविक संचय है। वात का ग्रीष्म में, पित्त का वर्षा में कफ का हेमन्त में स्वाभाविक संचय होता है।

कोपस्तून्मार्गगामिता-
संचयेऽपहृता दोषा भवन्ति नोत्तरागतीः।
तेतूत्तरासुगतिषु भवन्ति बलवत्तराः॥

प्रकोप :- अधिक संचित होने से संचय की अग्रिम ऋतु में स्वाभाविक प्रकोप होता है यह स्वाभाविक है। मिथ्या आहार विहार से अस्वाभाविक प्रकोप होता है। दोषों के प्रकुपित होने को प्रकोप कहते हैं।

वायु-प्रावृट या वर्षा में प्रकुपित होता है पित्त शरद काल में एवं कफ का वसन्त में स्वाभाविक प्रकोप होता है।

कुपितानां हि दोषाणां शरीरे परिधावताम्।
यत्र संग खवैगुण्यात् व्याधिस्तत्रोपजायते॥

प्रसर - संचय एवं प्रकोप के समय यदि दोषों का प्रतिकार नहीं किया जाय तो वे प्रसार करने लगते हैं। जिस प्रकार संधान क्रिया सुराबीज आदि समय पर नहीं निकाला जाय तो उसमें फरमन्टेशन (अभिषव, उत्सेचन) होकर पात्र से बाहर आकर फैलने लगते है उसी प्रकार संचित दोषों का समय पर निर्हरण नहीं करने पर वे शरीर में फैलने लगते हैं यही प्रसर है।

स्थान संश्रय :- प्रसरावस्था में दोषों की समय पर चिकित्सा नहीं की जाय तो वे प्रसार करते हुए अवयव विशेष में या स्थान विशेष पर रुक जाते हैं। वहां दोष धातु एवं मलों को दूषित करते हैं। यही दोष दूष्य सम्मूर्च्छनावस्था है। तथा दोषों के यहां संग के कारण रोग उत्पन्न होते हैं।

दोष गति भेद :- कुपित दोषों की तीन प्रकार की गतियां होती है- 1. क्षय होना, 2. सामान्य, 3. वृद्धि होना। 1. ऊर्ध्व गति, 2. अधोगति, 3. तिर्यक गति, 1. कोष्ठ, 2. शाखा, 3. मर्मास्थि सन्धि, मार्ग दृष्टि से आभ्यन्तर, बाह्यमार्ग, मध्यमरोग मार्ग।

प्रश्न :- निम्नलिखित की परिभाषा लिखें रस, वीर्य, विपाक, विशेष, कार्यकारणभाव, कारण?

उत्तर :- रस :- आहार पाचन के पश्चात् आहार का जो सार अंश आन्त्र में अवशोषित होकर शरीर के समस्त उपादानों का यथाविधि प्रीणन एवं पोषण करता है वह रस होता है।

रसना (जिह्वा) द्वारा ग्रहण किये स्वाद को रस कहते हैं **रस्यते आस्वाद्यते इति रसः** ये रस छः होते है। मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त एवं कषाय।

वीर्य :- द्रव्य की कार्यकारी शक्ति (Active Property) को वीर्य कहते है अथवा जिस शक्ति के द्वारा द्रव्य कार्य करता है वह वीर्य है। यह शीत, उष्ण या लघु, गुरु दो प्रकार का होता है। कुछ विद्वान 20 गुर्वादि गुणों में से शक्ति सम्पन्न 8 को वीर्य मानते है यथा- शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, गुरु, लघु, मृदु तथा तीक्ष्ण।

जाठरेणाग्निना योगाद्यदुदेति रसान्तरम्।
रसानांपरिणामान्ते स विपाक इति स्मृतः॥

विपाक :- आहार पाक क्रिया के अन्त में भोजन का सार जो विशिष्ट रस उत्पन्न होता है वह विपाक या निष्ठापाक है। दोषों की प्रबलता से मधुर, अम्ल एवं कटु तीन प्रकार का विपाक बनता है। यथा-

मधुर एवं लवण का	मधुर
अम्ल का	अम्ल
कटु तिक्त कषाय का	कटु

सुश्रुत ने गुरु, लघु दो विपाक बताये है इनमें मधुर, अम्ल, गुरु तथा कटु लघु होता है।

कार्यकारण भाव :- 1. कारणों द्वारा उत्पन्न फल कार्य कहलाता है। 2. समवायि, असमवायि एवं निमित्त कारणों से सहयोग से उत्पन्न भाव को कार्य कहते हैं।

मिट्टी, चाक, कुम्भकार आदि कारण है तथा इनके द्वारा निर्मित कुम्भ (घड़ा) कार्य है।

कारण :- जिन माध्यमों द्वारा कार्य की उत्पत्ति होती है वे साधन कारण कहलाते हैं।

कार्यनियतपूर्ववृत्तिकारणम्

विशेष :- कार्य का पूर्व भावी होना, निश्चित रूप से कार्य के पूर्व रहना एवं अन्यथा सिद्ध रहित होना कार्य का स्वरूप या परिभाषा है।

प्रश्न :- निम्नलिखित की परिभाषा लिखें कोष्ठ, स्रोतस, आम, विरूद्धासन, अध्यशन, समशन?

उत्तर :- कोष्ठ :- कोष्ठपदेन च उदरोरसो गुहे अन्नवहाख्यं महास्रोतश्च परिगृह्यते (डा0 शर्मा)

क्रमश महास्रोतस के उरो, उदर एवं आन्त्र भाग को कोष्ठ कहा है। खाली स्थान जहां से आहार का पूर्ण पाक होता है। वह कोष्ठ है।

सुश्रुत ने 8 स्थानों को कोष्ठ कहा है-आमाशय, अग्न्याशय, पक्वाशय, मूत्राशय, रूधिराशय, हृदय उण्डूक एवं दोनों फुफ्फुस।

कोष्ठ :- गल विवर से लेकर गुद-पर्यन्त भाग को कोष्ठ कहा है। अन्तराधि (डल्हण) या आजत्रोराकटेः (इन्दु) अर्थात् जत्रु से कटि तक का भाग।

स्रोतस् :- जिनमें स्रवण क्रिया होती हैं वे स्रोतस् कहलाते हैं।

धातुओं के रूपान्तर अर्थात् शरीरगत अनेक प्रकार के भावों की उत्पत्ति में तथा उनको वहन करने में भाग लेने वाले अवयव स्रोतस कहे जाते हें ये अनेक प्रकार के होते हैं। चरक ने 13 एवं सुश्रुत ने 11 प्रत्येक दो दो अर्थात् 24 बताये है।

जाठरानल दौर्बल्याद् विपक्वस्तु यो रसः- स आमः।

आम :- जठराग्नि तथा धात्वाग्नि की दुर्बलता से अन्न तथा प्रथम धातु का समुचित परिपाक नहीं होने से जो अपक्व अन्नरस से अपक्व रस धातु की उत्पत्ति होती है उसे आम कहते हैं।

विद्यादध्यशन भूयो भुक्तस्योपरि भोजनम्।

अकाले बहु चाल्पं वा भुक्तं तु विषमानशनम्। वा०सू० 8/34

विरुद्धाशन :- आहार को अनेक प्रकार से विरुद्ध बताया गया है। चरकानुसार संयोग, संस्कार मात्रा, देश, काल, अवस्था, स्वभाव, पात्र आदि के कारण अनेक आहार विरुद्ध होते है उनका सेवन विष के समान बताया गया है ये तत्काल या कालान्तर में मारक होते हैं।

अध्यशन :- खाये हुए अन्न के बिना पचे ही पुनः आहार करना अध्यशन कहलाता है।

मिश्रं पथ्यमपथ्यं च भुक्तं समशन मतम्।

समशन :- पथ्य एवं अपथ्य को मिलाकर खाना समशन कहलाता है।

प्रश्न :- निम्नलिखित की परिभाषा लिखे योगवाह, विदाही, विष्टम्भी, पथ्य, अपथ्य, कृतान्न वर्ग, अवस्थापाक, वेग, सात्म्य, ओक सात्म्य, देश सात्म्य, अत्यशन, शोधन?

उत्तर :- योगवाह :- योगात् योगिनो गुणं वहतीतियोगवाहः। (चक्रपाणि)

जो द्रव्य या दोष जिसके सम्पर्क में आता है। उसके गुणों को ग्रहण कर लेता है वह योगवाह कहलाता है। 1. मधु को योगवाह कहा है अतः औषध अनुपान एवं सहपान में प्रयोग करते हैं।

2. योगवाहः परं वायुः संयोगादुभयार्थकृत।

आयुर्वेद में वायु को योगवाही कहा है। यह कफपित्त के संयोग से उनके गुणों का ग्रहण कर जिसके साथ युक्त होता है। उसी दोष के कर्म प्रदर्शित करता है।

विदाही :- जो द्रव्य पच्यमान अवस्था में पित्त का प्रकोप कर उससे विदाह को उत्पन्न करते है उन्हें विदाही कहते है। ये तीक्ष्ण, उष्ण वीर्य, कटु, अम्ल लवण वाले होने से विदाह उत्पन्न करते हैं जैसे राजिका, भल्लातक, चित्रक, क्षार, सर्षप, मरिच।

विषटम्भी :- जो द्रव्य पच्यमानावस्था में अत्यधिक प्रतिलोम वायु की उत्पत्ति करते हैं वे विष्टम्भी होते है जैसे कटहल, लोणिका।

पथ्य :- जो द्रव्य प्रयोग करने पर अपने गुणों के कारण दोष एवं धातुओं को सम रखते हुए शरीर का प्रीणन एवं पोषण करें, जो सदैव सेवनीय हों, रोग एवं आरोग्य दोनों अवस्थाओं में उपयोगी एवं सात्म्य हो वे पथ्य कहलाते है। सु०सू० में धान्य, मांस, घृत, दूध, लवण, शाक एवं अम्ल द्रव्यों में उपयोगी द्रव्यों का वर्णन शालि चावल, मूंग, एण एवं हरिण मांस गोधृत, दुग्ध, सैन्धव एवं अम्ल को पथ्य कहा है।

अपथ्य :- जो द्रव्य दोष, देश, काल, प्रकृति रोग एवं स्वस्थ्य अवस्था में सेवनीय नहीं हो उन्हें अपथ्य कहा गया है। पथ्य के विपरीत अपथ्य कहे गये हैं। पथ्य में बताये द्रव्यों के अतिरिक्त एवं देश, दोष, आदि की दृष्टि से पथ्य भी अपथ्य हो सकते है।

कृतान्न वर्ग :- आहार द्रव्यों को संस्कारित कर या पाक प्रक्रिया द्वारा भोजन बनाया जाता है। यही कृतान्न वर्ग है। इनमें प्रतिदिन के आहार, शाक, रोटी, खिचडी, दलिया आदि। इस वर्ग में विभिन्न व्यंजनों के संधान का वर्णन किया गया है तथा संस्कारित करने पर इनके गुण दोषों की वृद्धि का भी वर्णन किया गया है। जैसे पुराने चावलों का भात हल्का तथा शालि चावलों एवं चिवड़े या भात, भारी होते है। (भाव प्रकाश)

भक्त लघु पुराणस्य शालेस्तच्चिपिटो गुरुः।

अवस्थापाक :- भोजन पाक प्रक्रिया में प्रथम मुख में भोजन चर्वण होता है। द्वितीय अवस्था में ग्रहणी में पहुंचने पर पाक होता है तथा आंतों में पहुचने पर जलीयांश का अवशोषण तथा सार एवं मल भाग पृथक होते है। इस प्रकार विभिन्न अवस्थाओं में भोजन परिपाक के परिवर्तन को अवस्थापाक कहते हैं।

वेग :- मूर्त द्रव्यों में होने वाले गति प्रवाह को वेग कहते है। मल, मूत्र, वमन आदि के उत्पन्न स्थिति को भी वेग कहते है। अतः आयुर्वेद में वेग का अनेको अर्थों में प्रयोग किया-

ज्वर में वेगावरोध सन्ताप की टीका में लिखा है :-

वेगावरोधो वात मूत्रपुरीषादीनामनिर्गमनो।

सात्म्य :- शरीर के प्रीणन पोषण में जो आहार सर्वथा, सभी स्थिति में अनुकूल हो वह सात्म्य है। यह सात्म्य पांच प्रकार का होता है-देश, जाति, ऋतु, रोग एवं ओक सात्म्य।

ओक सात्म्य :- जो आहार विहार अनुपयोगी एवं अनुकूल नही होने पर भी अभ्यास के कारण, शरीर के लिए उचित हो अर्थात् विकार उत्पन्न नहीं करें वे ओक सात्म्य है।

देश सात्म्य :- देश से शरीर एवं भूमि विशेष दोनों लिए है अतः 1. शरीर सात्म्य भी दो प्रकार का है-सम्पूर्ण शरीर, सात्म्य या अवयव विशेष सात्म्य यथा मधुर रस शरीर सात्म्य है तथा जो अंग विशेष हृदय, आंख आदि के लिए सात्म्य हो वह अवयव सात्म्य है।

अत्यशन :- तृप्ति के अधिक आहार स्वाद के कारण या प्रज्ञापराधिक काल ग्रहण करना अत्यशन कहलाता है, यह सभी दोषों को प्रकुपित करने वाला होता है।

वा०सू०:- अतिमात्रं पुनः सर्वानाशुदोषानुप्रकोपयेत्।

प्रश्न :- शोधन, पञ्चकर्म, शमन, लंघन, बृंहण, वेग एवं अनुपान की परिभाषा लिखें?

उत्तर :- शोधन :- शोधन शब्द के भी आयुर्वेद में अनेक अर्थ है-

1. शरीर शोधन।

2. धातु रत्नादि का शोधन करना।

3. काष्ठोषधियों का शोधन करना।

परिभाषा :- बढ़े हुए एवं प्रकुपित दोषों को शरीर से बाहर निकालने की प्रक्रिया को शोधन या संशोधन कहते हैं। यह शोधन पांच प्रकार का है बस्ति, वमन, विरेचन, शिरोविरेचन एवं रक्तस्राव।

संशोधन द्वारा शुद्ध दोषों का पुनः प्रादुर्भाव नहीं होता। **ये तु संशोधनै शुद्धा न तेषां पुनरूद्भवः।**

स्थानाद्वहिर्नयेदूर्ध्वमधश्च्-देह संशोधनम्।

पञ्चकर्म परिभाषा :- स्नेह स्वेदादि द्वारा शरीरस्योत्क्लिष्ट दोषाणां यथासन्नमार्गेण बहिर्निहरणकर्त्तृत्वं संशमन कर्तृत्वं पञ्चकर्मत्वम् (पं० हरिदत्त शास्त्री)

स्नेह स्वेदन द्वारा शरीर में उत्कृष्ट एवं चलायमान दोषों को निकट के मार्ग से वमन, विरेचन, बस्ति एवं शिरोविरेचन द्वारा बाहर निकालने एवं दोष शमन प्रक्रिया को पंचकर्म कहते है।

शमन :- 1. प्रकुपित दोषों को औषध प्रयोग द्वारा शान्त करने की प्रक्रिया को शमन कहते है। 2. सामान्य दोषों को शान्त करने की प्रक्रिया को भी शमन कर्म कहते है।

तीन प्रकार के द्रव्यों का चरक में उल्लेख है- 1. दोष शमन करने वाले, 2. कुछ धातु प्रदूषक होते है, 3. दोषों को सम अवस्था में रखने वाले स्वस्थ हित होते है।

शान्तिरामाशयोत्थानां व्याधीनां लंघनं क्रिया।

लंघन :- जो द्रव्य अपने प्रभाव से शरीर को कृश करते हों तथा शरीर में हल्कापन लाते हैं उन्हें लंघन कहते है। इसी का दूसरा नाम लेखन या कर्शन भी कहते है। ये द्रव्य वायु एवं अग्नि तत्वों युक्त होते हैं तथा लघु, तीक्ष्ण, विशद, रूक्ष, सूक्ष्म, खर एवं सर गुण प्रधान होते हैं।

बृहत्वं यच्छरीरस्य जनयेतच्च बृहणम्।

बृंहण :- शरीर को पुष्ट करने वाले द्रव्य बृंहण कहलाते है। ये द्रव्य विशेष रूप से मांसधातु को बढ़ाते है। गुरु, स्निग्ध , स्थूल, मन्द, स्थिर एवं श्लक्ष्ण गुण वाले होते हैं इनमें पृथ्वी एवं जल तत्व की अधिकता होती है।

अनु सह पश्चात् वा पीयते इति अनुपान।

अनुपान :- औषध सेवन के समय जिस में मिलाकर सेवन करने अथवा औषध सेवन के पश्चात् दूध, उष्ण जल या स्वरस आदि का प्रयोग किया जाता है। वे अनुपान कहलाते हैं।

अनुपान औषध संवहन एवं शोषण तथा पाचन में सहायक होता है ये अनुपान रोगी, रोग, औषध की दृष्टि से निर्धारित किये जाते है।

प्रश्न :-प्रत्यय परिभाषा, तुमुन, त्वा, क्तवतु का स्वरूप एवं दो-दो उदाहरण लिखो?

उत्तर :- प्रत्यय :- मूल शब्द या धातु (क्रियापद) के अन्त में लगने वाले शब्दांश को प्रत्यय कहते है। इन प्रत्ययों के प्रयोग

से मूल शब्द में परिवर्तन आ जाता है। इन प्रत्ययों के योग से ही कोई भी मूल शब्द व्याकरिणक इकाई की श्रेणी में आकर 'पद' कहलाता है। **'सुप्तिङ्न्तं पदम्''** सु, औ, जस, अम्, औट्, शस्, टा, भ्अम्, भिस, ङे, भ्याम्, भ्यस्, ङस्, भ्याम्, भ्यस्, ङस्, ओस्, आम्, ङि, ओस, सुप् ये इक्कीस (21) सुबन्त प्रत्यय है। इसी प्रकार तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस् ये नौ प्रत्यय (9) परस्मैपदी धातुओं में लगने वाले तथा त आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इट्, वहि, महिङ् ये नो प्रत्यय (9) आत्मने पदी धातुओं में लगने वाले इस प्रकार कुल 18 प्रत्यय तिङन्त कहलाते है। इन्हीं सुबन्त और तिङन्त् प्रत्ययों के योग से कोई भी मूल शब्द या धातु पद का रूप ग्रहण करते हैं

मुख्यत: इन प्रत्ययों को दो भागों में विभक्त किया गया है- 1. कृत् प्रत्यय, 2. तद्धित प्रत्यय।

कृत् (कृदन्त) प्रत्यय :-

जो प्रत्यय क्रिया पदों (धातुओं) में प्रयुक्त होते है, उन्हें कृत् (कृदन्त) प्रत्यय कहते है। यद्यपि कृदन्त प्रत्यय बहुत से हैं परन्तु यहाँ हम पाठ्यक्रम में निर्धारित प्रत्ययों का ही उल्लेख कर रहे हैं।

क्त, प्रत्यय- (भूतकालिक प्रत्यय)

क्त प्रत्यय का प्रयोग भूतकाल के अर्थ में होता है। इस प्रत्यय का 'त' शेष बचता है। इस प्रत्यय का प्रयोग कर्मवाच्य तथा भाववाच्य के वाक्यों में होता है। परन्तु गम्, प्राप् (आप्), श्लिष, शी, स्था, वस्, जन्, सह आदि धातुओं के साथ कर्तृवाच्य में भी 'क्त' प्रत्यय का प्रयोग होता है। अकर्मक धातुओं के साथ 'क्त' प्रत्यय कर्तृवाच्य और भाववाच्य में भी होता है। गम्, हस, शी, स्था, वस, भी आदि अकर्मक धातुओं के साथ क्त प्रत्य कर्तृवाच्य और भाववाच्य में भी होता है।

जैसे- बालकः गतः।
बालिका भीता।
छात्रः हसितः।

सकर्मक धातुओं के साथ 'क्त' प्रत्यय का प्रयोग -

उदाहरण :- छात्रेण पाठः पठितः।
तेन कार्यं कृतम्।
सा गृहं गता।
मया प्रवचनं श्रुतम्।
मया भोजनं कृतम्।
त्वया किं श्रुतम्।

क्तवतु प्रत्यय :-

क्तवतु प्रत्यय भी भूतकाल के अर्थ में प्रयुक्त होता है। क्तवतु 'तवत्' शेष रहता है। इस प्रत्यय का प्रयोग कर्तृवाच्य के वाक्यों में होता है। इस प्रत्यय से बने शब्द का रूप पुंल्लिङ्ग में भवत् के समान, स्त्रीलिङ्ग में नदी के समान तथा नपुंसक लिङ्ग में जगत् के समान चलते है।

उदाहरण :-

पुलिङ्ग प्रयोग -	रमेशः पुस्तकं **पठितवान्।**	रमेश ने पुस्तक पढ़ी।
	दिनेशः ग्रामं **गतवान्।**	दिनेश गांव गया।

स्त्रीलिङ्ग प्रयोग - छात्रा विद्यालयं **गतवती।** छात्रा विद्यालय को गयी।

नपुंसकलिङ्ग प्रयोग- दधि भूमौ **पतितवत्।** दही भूमि पर गिरा।
मनः शान्तं **भवितवत्।** मन शान्त हुआ।
पत्रं पृथित्यां **पतितवत्।** पत्र जमीन पर गिरा।

क्तवतु प्रत्यय का द्विवचन और बहुवचन में प्रयोग के उदाहरण :-

द्विवचन में प्रयोग-

बालकौ पुस्तकानि **पठितवन्तौ।** दो बालकों ने पुस्तकें पढ़ी।
युवाम् विद्यालयं **गतवन्तौ।** तुम दोनों विद्यालय गए।
आवाम् ग्रामं **गतवन्तौ।** हम दोनों गांव को गए।

बहुवचन में प्रयोग :-

छात्राः पुस्तकानि **पठितवन्तः।** छात्रों ने पुस्तकें पढ़ी।
यूयम् धनं **गृहीतवन्तः।** तुम सबने धन ग्रहण किया।
वयं कार्याणि **कृतवन्तः।** इम सबने कार्य किया।

पूर्वकालिक प्रत्यय क्त्वा तया ल्यप्।

क्त्वा प्रत्यय :- खाकर, पीकर, सोकर, जाकर गाकर आदि पूर्वकालिक क्रिया पदों में 'क्त्वा' प्रत्यय का प्रयोग होता है। सेट धातुओं में 'इ' लगकर 'क्त्वा' का प्रयोग होता है तथा अनिट् धातुओं में 'इ' का प्रयोग नहीं होता। सेट् धातुऐं में जैसे-पठित्वा, खादित्वा, हसित्व, चलित्वा आदि रूप बनते हैं तथा अनिट् धातुओं में 'क्त्वा' लगने पर हत्वा, गत्वा, पीत्वा, दत्वा, स्नास्वा आदि प्रयोग बनते हैं।

उदाहरण :- सः प्रतिदिनं स्नानं **कृत्वा** (स्नात्वा) भोजनं खादति।
वह प्रतिदिन स्नान करके भोजन खाता है।
अहं **पठित्वा** आगच्छामि। मैं पढ़कर आता हूँ।
सेना शत्रून् **जित्वा** आगच्छति। सेना शत्रुओं को जीतकर आरती है।
रमेशः सदैव **हसित्वा** वदति। रमेशः सदा ही हंसकर बोलता है।
अहं गुरुं **नत्वा** आगच्छामि। मैं गुरु को प्रणाम करके आता हूँ।

ल्यप् प्रत्यय :- धातु से पहले यदि कोई अव्यय, उपसर्ग च्वि प्रत्यय तो क्त्वा के स्थान पर 'ल्यप्' हो जाता है। 'ल्यप' का 'य' शेष रहता है। ल्यप् प्रत्यय वाले शब्द के रूप नहीं चलते हैं।

उदाहरण :- सः लेखं **विलिख्य** सुखम् अनुभवति। वह लेख लिखकर सुख का अनुभव करता है।
श्रमेण संपठ्य सफली भवतु। परिश्रम से पढ़कर सफल होओ।
प्रातः **उत्थाय** भ्रमणं कुरु। प्रातः उठकर भ्रमण करो।

तव्यत् प्रत्यय :

तव्यत् प्रत्यय प्रयोग 'चाहिए' तथा 'योग्य' के अर्थ में होता है। इस प्रत्यय का 'तव्य' शेष रहता है। यह सकर्मक धातु के साथ 'कर्मवाच्य' में तथा अकर्मक 'धातु के साथ भाव वाच्य में प्रयुक्त होता है। त्वयत् प्रत्ययान्त शब्द के रूप पुंल्लिङ्ग में 'बालक' के समान, स्त्री लिङ्ग में 'लता' के समान एवं नपुंसक लिङ्ग में 'पुस्तक' के समान चलते है।

उदाहरण :-

तेन पाठः **पठितव्यः।**	उसे पाठ पढ़ना चाहिए।
मया कार्यं **कर्तव्यम्।**	मुझे कार्य करना चाहिए।
त्वया गीता **पठितव्या।**	तुझे गीता पढ़नी चाहिए।
त्वया तत्र न **गन्तव्यम्।**	तुझे वहां नहीं जाना चाहिए।
मया गन्तव्यम्।	मुझे जाना चाहिए।

योग्य अर्थ में प्रयोग :-

पठितव्यः एषः पाठः।	पढ़ने योग्य (पढनीय) यह पाठ है
कर्तव्यस्य कार्यस्य चयनं कुरु।	करने योग्य कार्य का चयन करो।
गन्तव्येन मार्गेण चल।	जाने योग्य मार्ग से चलो।

अनीयर् प्रत्यय :-

तव्यत् प्रत्यय की भाँति अनीयर् प्रत्यय भी चाहिए तथा योग्य अर्थ में होता है। इस प्रत्यय का 'अनीय' शेष रहता है। यह सकर्मक धातु के साथ 'कर्मवाच्य' में तथा अकर्मक धातु के साथ भाववाच्य में प्रयुक्त होता है।

उदाहरण :- त्वया लेखः लेखनीयः।	तुझे लेख लिखना चाहिए।
मया पाठः पठनीयः।	मुझे पाठ पढना चाहिए।
रमेशेण कार्यम् करणीयम्।	रमेश से कार्य किया जाना चाहिए।
तेन सत्यं वदनीयम्।	उसे सत्य बोलना चाहिए।

योग्य अर्थ में 'अनीयर्' का प्रयोग :-

करणीयं कार्यं कुरु।	करने योग्य कार्य करो।
दर्शनीयं चित्रं पश्य।	देखने योग्य चित्र को देखो।
पानीयं जलं पिव।	पीने योग्य जल पिओ।
पाठनीयं पुस्तकं पठ।	पढ़ने योग्य पुस्तक पढ़।

शतृ-शानच् प्रत्यय :-

शतृ और शानच् प्रत्ययों का प्रयोग होता हुआ, होते हुए तथा होती हुई अर्थों में होता है। 'शतृ' प्रत्यय का 'अत्' (नपुं० लिङ्ग में) पुं० में अन् तथा स्त्री लिङ्ग अती या अन्ती शेष बचता है। परस्मैपदी धातुओं के साथ शतृ प्रत्यय तथा आत्मनेपदी धातुओं के साथ शानच् प्रत्यय होता है। शतृ-प्रत्ययान्त शब्द के रूप पुंल्लिङ्ग में 'गच्छत्' के समान, स्त्रीलिंङ्ग में 'नदी' के समान तथा नपुंसक लिङ्ग में जगत् के समान चलते है।

शतृ प्रत्यय के प्रयोग के उदाहरण :-

बालकः गीतं गायन् गच्छति।	बालक गीत गाता हुआ जाता है।
सा पाठं स्मरन्ती आगच्छति।	वह पाठ को याद करती हुई आती है।
दधि पतत् अस्ति।	दही गिर रहा है।
गच्छन्तं यानं पश्य।	जाते हुए यान को देखो।

शानच् प्रत्यय के उदाहरण :-

बालकः मोदमानः पठति।	बालक प्रसन्न होता हुआ पढ़ता है।
भिक्षुकः याचमानः चलति।	भिखारी मांगता हुआ चलता है।

प्रश्न :- ल्युट्, तृच्, एवं ण्वुल के दो-दो उदाहरण दें?

उत्तर :- ल्युट् प्रत्यय :- धातु में 'ल्युट्' प्रत्यय का प्रयोग भाववाचक शब्द बनाने के लिए होता है। ल्युट् प्रत्ययान्त शब्द नपुंसक लिङ्ग होता है। 'ल्युट्' प्रत्यय के 'यु' को 'युवोरनाकौ' सूत्र से 'अन' आदेश होता है, यही 'अन' धातु में जुड़कर ल्युट् प्रत्ययान्त बनते हैं।

उदाहरण :-

सः **लेखनं** करोति।	वह लेखन करता है।
शिशुः **शयनं** करोति।	बालक शयन करता है।
बालकाः **क्रीडनं** कुर्वन्ति।	बालक क्रीडन करते हैं।
वानरः **आरोहणं** करोति।	बन्दर आरोहण करता है।
सिंहः **गर्जनं** करोति।	शेर गर्जन करता है।
नृपः **दानं करोति।**	राजा दान करता है।

उपर्युक्त वाक्यों में अधोरेखा (स्थूलाक्षर) वाले शब्दों में ल्युट् प्रत्यय का प्रयोग हुआ है।

तृच् प्रत्यय :-

'तृच्' प्रत्यय का प्रयोग 'वाला' (कर्ता) अर्थ में होता है। 'तृच्' प्रत्यय का 'तृ' शेष रहता है। जैसे 'कर्तृ' (करने वाला) 'हर्तृ' (हरने वाला) उपकर्तृ (उपकार करने वाला) धर्तृ (धारण करने वाला) आदि। तृच् प्रत्यायान्त शब्द के रूप पुंल्लिङ्ग में 'कर्तृ' शब्द के समान तथा स्त्रीलिङ्ग में नदी के समान तथा नपुंसक लिङ्ग में कर्तृ के समान चलेंगे। 'तृच्' प्रत्यय से बने शब्दों का प्रयोग संज्ञा तथा विशेषण के रूप में होता है।

उदाहरण :-

नेता (नेतृ) भाषणं ददाति।	नेता भाषण देता है।
पठिता विद्यालयं गच्छति।	पढ़ने वाला विद्यालय जाता है।
रक्षिता राष्ट्रं रक्षति।	रक्षा करने वाला राष्ट्र की रक्षा करता है।
पठित्री बालिका गच्छति।	पढ़ने वाली बालिका जाती है।
ईश्वरः जगतः **कर्ता, भर्ता, संहर्ता** च वर्तते। अथवा ईश्वरः जगतः **कर्तृ, भर्तृ, संहर्तृ** च वर्तते।	ईश्वर संसार कर्ता, पालन कर्ता तथा संहार करने वाला है।
जेता शत्रून जयति।	जीतने वाला शत्रुओं को जीतता है।
रचयिता ग्रन्थं रचयति।	रचनाकार ग्रन्थ रचता है।

ण्वुल प्रत्यय :-

ण्वुल प्रत्यय से बने शब्दों का प्रयोग भी तृच् प्रत्यय की भांति संज्ञा तथा विशेषण के रूप में होता है। 'ण्वुल' प्रत्यय के 'वु' को ''युवारनाकौ'' सूत्र से 'अक' आदेश हो जाता है। इसका प्रयोग 'वाला' अर्थ में होता है।

उदाहरण :-

गायकः गीतं गायति।	गाने वाला गीत गाता है।

सेवकः सेवां करोति।	सेवा करने वाला (सेवक) सेवा करता है।
लेखकः लेखं लिखति।	लिखने वाला (लेखक) लेख लिखता है।
प्रकृतिः जगतः **धारिका** अस्ति।	प्रकृति जगत को धारण करने वाली है।
ग्राहकः वस्तूनि क्रीणाति।	ग्राहक चीजें खरीदता हैं।
सा **नायिका** अस्ति।	वह नायिका है।

णिनि (इन्) प्रत्यय :

णिनी प्रत्यय से बने शब्दों का प्रयोग संज्ञा तथा विशेषण के रूप में होता है। णिनि प्रत्यय का 'इन' शेष बचता है। ''णिनी'' प्रत्यय वाले शब्द नकारान्त पुल्लिङ्ग होते हैं। इनके रूप पुं० में करी (करिन्) के समान, स्त्री लिङ्ग में नदी के समान चलते हैं।

उदाहरण :-

1. सः मम **सहपाठी** अस्ति।	वह मेरा सहपाठी है।
2. सुरेशः **प्रमादी** छात्रः अस्ति।	सुरेश प्रमादी (उदण्ड) छात्र है।
3. **ब्रह्मचारी** प्रातः उत्तिष्ठति।	ब्रह्मचारी प्रातः काल उठता है।
4. **वेदपाठिनः** वेदं पठन्ति।	वेदपाठी वेद पढ़ते हैं।
5. गीता सुनीतायाः **सहपाठिनी** अस्ति।	गीता सुनीता सहपाठिनी है।
6. सा **लोभिनी** नारी अस्ति।	वह लोभी नारी है।

तुमन् प्रत्यय :- तुमन् प्रत्यय का प्रयोग 'के लिए' अर्थ में होता है। 'तुमन्' का प्रत्यय का 'तुम् शेष बचता है। तुमन् प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं। अतः इनके रूप नहीं चलते।

उदाहरण :-

1. अहं **गन्तुम्** इच्छामि।	मैं जाना चाहता हूँ।
2. सः **स्नातुं** गच्छति।	वह नहाने के लिए जाता है।
3. बालकः **भोक्तुं** आगच्छति।	बालक भोजन करने के लिए आता है।
4. सः **पठितुं** विद्यालयं गच्छति।	वह पढ़ने के लिए विद्यालय जाता है।
5. सः कार्यं **कर्तुम्** उद्यतोऽस्ति।	वह कार्य करने के लिए तैयार है।

क्तिन प्रत्यय :- 'क्तिन्' प्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग होते हैं। इनसे भाव वाचक संज्ञा बनती है। 'क्तिन्' प्रत्यय का ति शेष बचता है।

उदाहरण :-

1. रघुवंश-महाकाव्यं महाकवि कालिदासस्य **कृतिः** अस्ति।
   रघुवंश महाकाव्य महाकवि कालिदास की कृति है।

2. भारतीय कृषकस्य **स्थितिः** दयनीता अस्ति।
   भारतीय किसान की स्थिति दयनीय है।

3. पुरुषस्य **प्रवृत्तिः** अर्थप्रधाना अस्ति।
   पुरुष की प्रवृत्तिः अर्थप्रधान है।

4. गुरुं विना **गतिः** नास्ति।
   गुरु के विना गति नहीं है।

प्रश्न :- तद्धित प्रत्यय में मतुप, इनि एवं ठन् के दो-दो उदाहरण दें?

उत्तर :- तद्धित प्रत्यय :- तद्धित प्रत्यय संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण में लगते हैं। तद्धित प्रत्ययों के योग से एक नए शब्द का निर्माण होता है। जैसे 'बल' शब्द में 'मतुप् प्रत्यय लगकर बलवान शब्द बनता है, जिसका अर्थ है-बल वाला व्यक्ति। यहां बलवान शब्द विशेषण के रूप में प्रयुक्त है। इसी प्रकार धनवान्, बुद्धिमान, यशस्वी, तेजस्वी, मधुरता, दीनता, श्रेष्ठ, ज्येष्ठः आदि शब्द भिन्न-2 तद्धित प्रत्ययों के योग से बनते हैं। तद्धित प्रत्ययों की संख्या बहुत अधिक है। यहां हम पाठ्यक्रम में निर्धारित तद्धित प्रत्ययों का विवेचन प्रस्तुत कर रहे हैं। तद्धित प्रत्ययों का प्रयोग भिन्न-भिन्न अर्थों को बताने के लिए किया जाता है।

मतुप् प्रत्यय :-

मतुप् प्रत्यय का प्रयोग युक्त या वाला अर्थ में होता है। यदि शब्द के अन्त में 'अ' या 'आ' तथा 'य' हो तो मतुप् के मत् को वत् आदेश होता है कतिपय विकल्पों को छोड़कर। मतुप् प्रत्यय मत् शेष बचता है, जिसका मान् या वान् बनता है। जैसे गुणवान्, ज्ञानवान, बलवान्, श्रीमान्, धीमान्, बुद्धिमान्, श्रीमती बुद्धिमती, गतिमती आदि।

उदाहरण :-

1. सुरेशः **बलवान्** अस्ति।	सुरेश बलवान है।
2. रामचन्द्रः **विद्यावान्** वर्तते।	रामचन्द्र विद्यावान् है।
3. गीता **रूपवती** अस्ति।	गीता रूपवती (सुन्दर) है।
4. सीता **गुणवती** अस्ति।	सीता गुणवती है।
5. रमेशः **धीमान्** अस्ति।	रमेश बुद्धिमान है।

मतुप् प्रत्ययान्त शब्द के रूप पुंल्लिङ्ग में भगवत् के समान, स्त्रीलिङ्ग में नदी के समान तथा नपुंसक लिङ्ग में जगत् के समान चलेंगे।

इनि प्रत्यय :-

इनि प्रत्यय का प्रयोग भी वाला अर्थ में होता है इनि प्रत्यय का इन् शेष रहता है। इस प्रत्यय से अकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द नकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द बनकर युक्त या वाला अर्थ देता है। जैसे अभिमान से अभिमानित् (अभिमानी) विवेक से विवेकिन् (विवेकी) सुख से सुखिन् (सुखी) आदि शब्द बनते हैं।

उदाहरण :-

1. सर्वे **सुखिनः** भवन्तु।	सब सुखी हो।
2. **अभिमानी** जनः मानं न लभते।	अभिमानी व्यक्ति सम्मान नहीं पाता है।
3. दण्डी **सन्यासी** गच्छति।	दण्ड वाला सन्यासी जा रहा है।
4. कि दूरं **व्यवसयिनाम्।**	व्यापारियों के लिए दूर क्या?

ठन् प्रत्यय :-

ठन् प्रत्यय भी मत्वर्थीय है, अर्थात् इस प्रत्यय से बनने वाला शब्द भी 'वाला' या युक्त अर्थ का वाचक होता है। 'ठन्' तथा 'ठक्' प्रत्यय को 'इक्' आदेश हो जाता है। जिससे धन से धनिक, रस से रसिकः आदि शब्द बनते हैं।

उदाहरण :-

धनिकः दरिद्राय वस्त्राणि यच्छति।
बलिकः ग्रामं रक्षति।
रसिकः अभिनयं करोति।

भावार्थक 'त्व' प्रत्यय :-

भाव वाचक संज्ञा शब्द बनाने के लिए 'त्व' प्रत्यय का प्रयोग होता है त्व प्रत्ययान्त शब्द नपु० लिंङ होते हैं। महत्त्वम्, गुरुत्व, पटुत्व विद्वत्वं, नृपत्वम् आदि शब्द 'त्व' प्रत्यय के योग से बनते हैं।

उदाहरण :-

1. **विद्वत्वं** च **नृपत्वं** च नैव तुल्यं कदाचन।
   विद्वता (योग्यता) तथा नृपता (राजापन) की कमी तुलना नहीं की जा सकती।

2. पश्रिमस्य **महत्त्वं** सर्वे जानन्ति।
   परिश्रम के महत्वं को सब जानते हैं।

3. वानरस्य **चपलत्वं** प्रसिद्धं मस्ति।
   वन्दर की चंचलता प्रसिद्ध है।

4. श्री शंकराचार्यस्य संस्कृते **विद्वत्वं** प्रशंसनीयमस्ति।
   श्री शंकराचार्य की संस्कृत में विद्वत्ता प्रशंसनीय है।

प्रश्न :- तल्, तरप्, एवं तमप् प्रत्यय के दो-दो उदाहरण लिखें?

उत्तर :- तल् प्रत्यय :- 'तल्' प्रत्यय का प्रयोग भाववाचक स्त्रीलिङ्ग शब्दों का निर्माण करने के लिए होता है। 'तल्' का 'त' शेष बचता है, तथा स्त्रीलिङ्ग टाप् प्रत्यय के योग से 'आ' लगकर स्त्रीलिङ्ग भाववाचक पटुता, लघुता, महत्ता, विद्वत्ता, मधुरता, चपलता आदि शब्द बनते है।

1. वेदेषु स्वामी दयानन्दस्य **विद्वत्ता** प्रशंसनीया अस्ति।
   वेदों में स्वामी दयानन्द की विद्वत्ता प्रशंसनीय है।

2. ज्ञानस्य **महत्ता** सर्वस्वीकृता अस्ति।
   ज्ञान की महत्ता सर्व स्वीकृत है।

3. मधुनः **मधुरता** गुणकरी भवति।
   शहद को मिठास गुणकारी होती है।

4. अर्जुनस्य **पटुता** युद्धे आसीत्।
   अर्जुन की पटुता युद्ध विद्या में थी।

तरप् तथा ईयसुन् प्रत्यय :-

तरप् और ईयसुन् प्रत्यय का प्रयोग दो व्यक्तियों या वस्तुओं की तुलना करने में विशेषण वाचक शब्दों के लिए किया जाता

है। जैसे प्रियतरः पटुतरः, लघुतरः, दीर्घतरः, गुरुतरः, वरीयान्, गरीयान्, गरीयती, वरीआन् आदि। तरप् प्रत्यय वाले शब्दों रूप पुं० में राम के समान तथा स्त्रीलिङ्ग में लता के समान तथा नपु० लिङ्ग में 'जल' के समानल चलेगे तथा ईयसुन् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुं० में विद्वत् के सकार तथा स्त्री लिङ्ग विदुषी के समान चलेंगे।

उदाहरण :-

1. रामात् श्यामः **पटुतरः/ पटीयान्** अस्ति।
   राम से श्याम चतुर है।

2. एष ग्रन्थः तस्मात् ग्रन्थात् **लघुतरः/लघीयान्** अस्ति।
   यह ग्रन्थ उस ग्रन्थ से छोटा है।

3. जननी जन्मभूमिश्च स्वार्गात् अपि गरीयसी।
   जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढकर है।

4. देवदत्तः यज्ञदत्तात् दीर्घतरः अस्ति।
   देवदत्त यज्ञदत्त से लम्बा है।

तमप् तथा इष्ठिन् प्रत्यय :-

बहुतों में एक को विशिष्ट बताने के लिए तमप् तथा इष्ठिव् प्रत्यय का प्रयोग होता है। जैसे लघुतम, सूक्ष्मतम, दीर्घतम, श्रेष्ठतम, श्रेष्ठः, ज्येष्ठः, बलिष्ठः, कनिष्ठः आदि।

उदाहरण :-

1. विद्यार्थिषु देवदत्तः **श्रेष्ठः।**
   विद्यार्थियों में देवदत्त श्रेष्ठ हैं।

2. महाराज सिंह सर्वेषु छात्रेषु **दीर्घतमः।**
   महाराज सिंह सभी छात्रों में लम्बा है।

3. यज्ञदत्तः भ्रातृषु **कनिष्ठः।**
   यज्ञदत्त भाईयों में छोटा है।

4. रामः चतुर्षु भ्रातृषु **ज्येष्ठः** आसीत्।
   राम चारों भाईयों में ज्येष्ठ (बड़े) थे।

5. दारासिंह मल्लेषु **बलिष्ठः** आसीत्।
   दारा सिंह पहलवानों में बलवान था।

इमनिच् प्रत्यय :-

इमनिच् प्रत्यय नकारान्त स्त्रीलिङ्ग भाववाचक शब्दों का निर्माण होता है। इमनिच् का इमन् शेष रहता है। इमनिच् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप आत्मन् के समान चलते हैं। महिमा, अणिमा, लघिमा, नीलिमा, हरीतिमा आदि शब्द बनते हैं।

उदाहरण :-

1. वर्षतौ वृक्षेषु **हरीतिमा** वर्धते।
   वर्षा ऋतु में हरियाली बढ़ जाती है।

2. गुरो: **महिमा** सर्वत्र गीयते।
गुरू की महिमा सर्वत्र गाई जाती है।

3. प्रकृते: **अणिमा** शास्त्रेषु वर्णिता।
प्रकृति की सूक्ष्मता शास्त्रों में वर्णित है।

4. शरद्-ऋतौ अम्बरस्य **नीलिमा** मनोहारिणी भवति।
शरद्-ऋतु में आकाश की नीलिमा मन को हरने वाली होती है।

ष्यञ् प्रत्यय :-

भाववाचक शब्दों के निर्माणार्थ 'ष्यञ्' प्रत्यय 'य' शेष रहता है। शब्दों के आदि में अ को आ तथा इ/ई को ऐ उ/ऊ को औ आदि वृद्धि होती है।

शौर्यम्, धैर्यम्, सौन्दर्यम्, सौख्यम्, काष्ण्यम् आदि शब्द बनते हैं।

उदाहरण :-

1. शिवाजी महोदयस्य शौर्यम् प्रसिद्धमस्ति।
शिवाजी का पराक्रम प्रसिद्ध है।

2. जनानां सौख्यंम् वर्धनीयम्।
जनों का सुख बढ़ाना चाहिए।

3. सर्वै: **धैर्य** धारणीयम्।
सबको धैर्य धारण करना चाहिए।

प्रश्न :- वाच्य (Voice) की परिभाषा एवं प्रकार लिखें?

उत्तर :- संस्कृत भाषा में 'वाच्य' का महत्वपूर्ण स्थान है।

वाच्य की परिभाषा (Defination of Voice) :-

वाच्य का अभिप्राय है, कहने का प्रकार अर्थात वाक्य में क्रिया द्वारा जो अभिव्यक्ति का प्रकार है, उसे वाच्य कहते हैं।

वाच्य के प्रकार :- वाच्य तीन प्रकार के होते हैं :-

1. कर्तृ वाच्य-(Active voice)

2. कर्म वाच्य-(Paisive voice)

3. भाव वाच्य- (Impresonal voice)

कर्तृवाच्य (Active voice) :- कर्तृवाच्य में कर्ता की प्रधानता होती है। इसका अभिप्राय यह है कि क्रिया कर्ता के अनुसार चलती है। यदि कर्ता प्रथम पुरुष एकवचन का है तो क्रिया भी प्र०पु० एकवचन की होगी। कर्ता में प्रथमा विभक्ति तथा कर्म में द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होगा।

उदाहरण :-

1. राम: पुस्तकं पठति।

2. त्वं पुस्तकं पठसि।
3. अहं ग्रामं गच्छामि।

उपनिर्दिष्ट तीनों वाक्यों में कर्तृपद 'राम' प्रथमा विभक्ति एक वचन का है तो क्रिया पठति भी प्र० पुरुष एक वचन की है। इसी प्रकार द्वितीय वाक्य का कर्तापद 'त्वम्' मध्यम पुरुष एक वचन है अतः गच्छसि क्रिया पद भी मध्यमपुरुष एकवचन का है। इसी प्रकार तृतीय वाक्य में कर्ता पद उत्तमपुरुष एकवचन का है तो क्रिया भी उत्तमपुरुष एकवचन भी है। अतः सार में कर्तृ वाच्य ये चार बाते प्रमुख हैं।

1. कर्ता की प्रधानता।
2. कर्ता में प्रथमा विभक्ति।
3. कर्म में द्वितीया विभक्ति।
4. क्रिया का पुरुष और वचन कर्ता के अनुसार।

उदाहरण :-

1. बालकः पुस्तकं पठति।
2. त्वम् विद्यालयं गच्छसि।
3. बालकाः समाचारपत्रं पठन्ति।
4. यूयम् कार्य कुरुथ।
5. अहम् पुस्तकं पठामि।
6. वयं गृहं गच्छाम।

कर्मवाच्य (Passive Voice)

1. कर्मवाच्य के वाक्य में कर्म की प्रधानता होती है।
2. कर्मवाच्य के वाक्य में कर्म में प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है।
3. कर्मवाच्य के वाक्य में कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है।
4. क्रिया का लिङ्ग व वचन कर्म के अनुसार होता है।
5. कर्मवाच्य के वाच्य में क्रिया यदुन्त आत्मने पदां होती है।

उदाहरण :-

1. रेखया पुस्तकं पठ्यते।
2. तेन बालकः दृश्यते।
3. छात्रेण पाठः पठ्यते।
4. तेन कार्य क्रियते।
5. मया भोजनं खाद्यते।
6. रामेण रावणः अहन्यत।
7. रामेण रावणः हतः।
8. भक्तेन ईश्वरः स्मर्यते।
9. पुत्रेण जनकः सेव्यते।

भाव वाच्य (Impersnal voice)

1. भाव वाच्य के वाक्यों में अकर्मक (कर्म रहित) धातुओं का ही प्रयोग होता है।

2. भाव वाच्य के वाक्यों में भी कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है।
3. भाव वाच्य के वाक्यों में भी क्रिया यङन्त आत्मनेपदी होती है।

उदाहरण :-

बालकेन दृश्यते।
तेन जाग्रियते।
त्वया रुद्यते।
त्वया स्थीयते।
मया न भीयते।
तेन भ्रियते।

उक्त वाक्यों में कर्म न होने के कारण भाववाच्य के वाक्य कहलाते हैं।

आगे कतिपय वाक्यों में ऐसे उदाहरण दिये जा रहे हैं जिनमें कर्तृवाच्य के वाक्यों को कर्म वाच्य में परिवर्तित किया गया है।

प्रश्न :- वाच्य परिवर्तन कीजिए?

उत्तर :- कर्तृवाच्य	**कर्मवाच्य**
1. बालकः पाठः पठति।	1. बालकेन पाठः पठ्यते।
2. सः जलं पिवति।	2. तेन जलं पीयते।
3. भक्तः ईश्वरं स्मरति।	3. भक्तेन ईश्वरः स्मर्यते।
4. छात्रः पुस्तकं पठति।	4. छात्रेण पुस्तकं पठ्यते।
5. सा गीतं गायति।	5. तया गीतं गीयते।
6. त्वं किं करोषि।	6. त्वया किं क्रियते।
7. अहं वेदं पठामि।	7. मया वेदः पठ्यते।
8. यूयम् संस्कृतं पठथ।	8. युष्माभिः संस्कृतं पठ्यते।
9. अहं पुस्तकम् अपठम्।	9. यथा पुस्तकं पठितम्।
10. सः कार्य कृतवान्।	10. तेन कार्य कृतम्।
11. श्रोतारः गीतं श्रुतवन्तः।	11. श्रोतृभि गीतं श्रुतम्।
12. पण्डितः यज्ञं कृतवान्।	10. पण्डितेन यज्ञः कृतः।

कर्तृवाच्य	**भाववाच्य**
1. बालकः उच्चैः हसति।	1. बालकेन उच्चैः हस्यते।
2. शिशुः रुदति।	2. शिशुना रुद्यते।
3. सः आसने तिष्ठति।	3. तेन आसने स्थीयते।
4. अहं सर्पात् विभेमि।	4. मया सर्पात् भीयते।

प्रश्न :- विशेषण-विशेष्य के नियम एवं प्रयोग रूप 10 वाक्य लिखो?

उत्तर :- संस्कृत भाषा में विशेषण-विशेष्य प्रयोग का ज्ञान बहुत आवश्यक है।

नियम :- वाक्य प्रयोग में जो लिङ्ग और वचन विशेष्य का होता है, वही लिङ्ग और वचन विशेषण का भी होता है। संख्यावाचक शब्द सदा विशेषण रूप में ही प्रयुक्त होते हैं। कर्मधारण समास में विशेषण-विशेष्य सम्बन्ध होता है।

उदाहरण :-

1. सा **मधुरं गीतं** गायति।
2. तस्याः **मधुरा आकृतिः** वर्तते।
3. तस्य **स्वरः मधुरः** अस्ति।
4. **सुन्दरी नारी** गच्छति।
5. **सुन्दरः बालकः** क्रीडति।
6. तत्र **सुन्दरं पुष्पम्** वर्तते।
7. **तानि चित्राणि सुन्दराणि** सन्ति।
8. आपणे **बहूनि वस्तूनि** विद्यन्ते।
9. **एकः बालकः** क्रीडति।
10. **द्वौ बालकौ** गच्छतः।
11. **त्रयः बालकाः** गायन्ति।
12. **द्वे बालिके** नृत्यतः।
13. **त्रयः छात्राः** धावन्ति।
14. तत्र **त्रीणि पुष्पाणि** सन्ति।
15. **तिस्रः बालिकाः** नृत्यन्ति।
16. **चत्वारो वेदाः** सन्ति।
17. **चतस्रः लताः** सन्ति।
18. **चत्वारि पदानि** पठन्तु।
19. **पञ्च बालकाः** पठन्ति।
20. सः **पीतं वस्त्रं** धारयति।
21. अहं तु **श्वेतानि वस्त्राणि** धारयामि।
22. सभायां **बहवः विद्वान्सः** सन्ति।
23. सरोवरे **अनेकानि कमलानि** सन्ति।
24. **तेन छात्रेण** पाठः पठितः।
25. **अनेन बालकेन** भोजनं कृतम्।
26. **अनया बालिकया** नृत्यं प्रदर्शितम्।

27. **तेन बालकेन** तं गीतम् श्रावितम्।

28. **विदुषा गुरुणा** तं छात्रं पाठितवान्।

29. **सर्वैः छात्रैः** दशरूप्यकैः **पञ्च वस्तूनि** क्रीतानि।

30. **दश बालकाः** पञ्चगीतानि गायन्ति।

उपर्युक्त सभी वाक्यों में विशेषण-विशेष्य का प्रयोग किया गया है तथा यह स्पष्ट किया गया है कि विशेष्य का जो लिङ्ग और वचन है, वही लिङ्ग और वचन विशेषण का भी है। संख्या वाचक शब्दों में एक से चार तक के संख्या वाचक शब्दों के रूप तीनों लिङ्गों में चलते हैं अतः इन वाक्यों में चार तक की संख्याओं के सभी लिङ्गों में प्रयोग दिखाया गया है। संस्कृत भाषा में शब्द का लिङ्ग नियत होने से विशेषण का प्रयोग उसी प्रकार विशेषण का वचन भी विशेषण्य के अनुकूल ही रहता है।